संस्थापित १८६७ ई०

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

एक प्रति ₹ २.००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) आजीवन शुल्क ₹ १०००

● वर्ष : १२२ ● अंक : २५ ● १८ जुलाई २०१७ श्रावण कृष्ण पक्ष नवमी/दशमी संवत् २०७४ ● दयानन्दाब्द १६३ वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११८

मानव परमात्मा की अनमोल कृति है

– डा० धीरज सिंह आर्य

मानव परमात्मा का अमृत पुत्र है। मानव आत्मा के रूप में परमात्मा का अंश है। एक शरीर से दूसरे शरीर में आत्मा का आवागमन जीवन की अनवरतता एवं अमरता का द्योतक है। आत्मा किसी योनि में जाती है। यह मनुष्य के कर्मों पर निर्भर है। महापुरुषों ने इस ज्ञान को आत्मसात कर मनुष्य में परमात्मा के प्रति भक्ति जगाने के लिए उसे मनुष्य बनाने के महत्व को समझा और जन्म से लेकर मृत्यु तक, पहले श्वास से अंतिम श्वास तक उसे उसके कर्त्तव्य के प्रति आगत किया, उसे जगाया। उन्होंने कहा कि मानवता का पाठ पढ़ाने के लिए किसी नए पंथ और सम्प्रदाय की नींव रखने की आवश्यकता नहीं है। हमारे धर्मग्रन्थों एवं शास्त्रों में वह सब मौजूद है। जो इंसान को उसका वजूद बताने और जताने के लिए पर्याप्त है। समाज को सही दशा और दिशा देने के शास्त्रों की शिक्षा का अनुसरण करना पड़ेगा। हम उनका अध्ययन करें। उन्हें अपनाएँ, जीवन में उतारे दैनंदिन में उनका प्रयोग करें। विचारों की विभिन्नता और विरोध के प्रति सहिष्णुता अपनाएँ। सत्य, प्रेम, और अहिंसा की ज्योति प्रज्जवलित करें। विश्व, बधुत्वं, वसुधैव कुटुम्बकम् की अवधारणा को जीवन में अन्तर्लीन करें। समाज को स्वस्थ, शक्तिमान एवं

सम्पूर्ण बनाने के लिए हमें अपने धर्मग्रन्थों एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताये गये आर्ष गन्थों का पठन–पाठन करना होगा। उनके प्रतिपादित दर्शन की पुर्नस्थापना करनी होगी, उन्हें मनुष्य के जीवन में उतरना होगा, उसके अनुरूप ही जीवन बनाना होगा। तब कही जाकर स्वयं की अनुभूति हो सकेगी और हम सत्य के निकट पहुँच सकेंगे। यही मात्र उपाय है। मानवता और नैतिकता के पुर्नजागरण का जिसकी कल्पना के साथ महर्षि दयानन्द जी ने आर्य समाज की स्थापना की और वैदिक संस्कृति के मूल यज्ञ को महत्ता दी एवं आर्ष ग्रन्थों के पढ़ने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि आर्ष गन्थों से अच्छे संस्कार बनते हैं। संस्कार ऐसे भाव हैं जो हमारे चित के अन्दर अनंतकाल से पड़े हैं।

संस्कारों के निवास को ही चित्र कहा जाता है यानि मन। संस्कार ही सारा शोधन कार्य करते है। यही बुद्धि हमारे ज्ञान का केन्द्र है, ज्ञान के अनुसार यही बुद्धि प्रवृत्ति कराती है। सभा प्रधान जी ने कहा कि आज आर्ष गन्थों के पठन–पाठन की प्रवृत्ति खत्म हो रही है। जिसके कारण आज समाज में अनेक प्रकार की समस्याए उत्पन्न हो गयी है। पढ़ने से ही हम सही गलत का आंकलन कर सकते है। महर्षि दयानन्द जी ने ''सत्यार्थ प्रकाश'' की रचना करके सम्पूर्ण आर्ष साहित्य का सार इस ग्रन्थ में लिख दिया है इसलिए प्रत्येक को आर्ष संस्कृति का संवाहक सत्यार्थ प्रकाश को अवश्य पढ़ना चाहिए। आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय से ही मानव जीवन का कल्याण हो सकता है।

वेदामृतम्

ऋतं चिकित्व ऋतमिच्चिकिद्धि[११], ऋतस्य धारा अनु तृन्धि पूर्वोः[११]।
नाहं यातुं सहसा न द्वयेन[१०], ऋतं सपाम्यरुषस्य वृष्णः[१०]।।

ऋग् ५.१२.२

हे सत्य के ज्ञाता! तू सदा सत्य को ही जान। सत्य ने ही द्यावापृथिवी को धारण किया हुआ है। सत्य ही किसी राष्ट्र को धारण करता है और सत्य से ही विभिन्न राष्ट्र परस्पर एक सूत्र में आबद्ध होते हैं। सत्य दो रूपों में रहता है, एक सत्य-ज्ञान और सत्य-विचार के रूप में, दूसरे सत्य-भाषण और सत्य-कर्म के रूप में। सबसे पहले तो तू सत्य को जान, सत्य को हृदयंगम कर, फिर तदनुकूल चिन्तन, भाषण और कर्म कर। न केवल तू स्वयं सत्य का पालन कर, अपितु अपने आदर्श सत्यमय जीवन से अन्यों को भी सत्य में प्रेरित कर। समाज के वातावरण को ही सत्यमय बना दे। सर्वत्र सत्य की श्रेष्ठ धाराओं को प्रवाहित कर दे। सत्य की धाराओं को बहाना आसान नहीं है, उसके लिए तप भी करना पड़ेगा। सत्य के हिमालय पर सत्य की धाराएँ असत्य की चट्टानों से अवरुद्ध हैं। पहले असत्य की उन बाधक चट्टानों को तोड़ना होगा। उन्हें तोड़ देने पर फिर सत्य की कलकल-निनादिनी धाराएँ स्वतः प्रवाहित होने लगेंगी।

हे भाई! मैं तुझे ही सत्य की धाराओं को बहाने का उपदेश नहीं कर रहा। आज से मैं स्वयं भी असत्याचरण को तिलांजलि दे रहा हूँ। आज से मैं असत्य को न तो उसके प्रबल रूप में स्पर्श करूँगा और न ही सत्य के साथ मिले हुए सत्यासत्य के रूप में। सत्य में असत्य की पुट रहने पर भी मैं कई बार अपने-आपको यह सन्तोष देता रहा हूँ कि मैं सत्य-सेवी हूँ। पर अब मैं समझ रहा हूँ कि यह तो आत्म-प्रवंचना है। जैसे किनकी-भर भी विष से मिश्रित अमृत त्याज्य होता है, ऐसे ही असत्य की एक कणी भी मिश्रित होने पर सत्य व्यर्थ हो जाता है। अतः आज से मैं असत्य का स्पर्श भी न करूंगा, अपितु विशुद्ध सत्य को ही जीवन में ग्रहण करूँगा। सत्य के रूप में रूपवान्, सत्यवर्षी, तेजामय प्रभु मेरे सम्मुख विद्यमान हैं। मैं तो उन्हीं के निर्मल सत्य का वरण करूँगी। हे प्रभु! अपना सत्य मुझे प्रदान मुझे प्रदान करो।

साभार वेदमञ्जरी

अन्तरंगाधिवेशन सूचना

सभी पदाधिकारियों, प्रतिष्ठत, सहयुक्त, अन्तरंग सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र० की अन्तरंग सभा का साधारण अधिवेशन दिनांक २३ जुलाई, २०१७ रविवार (श्रावण कृष्ण अमावस्या) को प्रातः ११ बजे से आर्य समाज शवायजपुर, पोस्ट-शवायजपुर, तहसील-शवायजपुर, जिला-हरदोई में कार्यवाहक प्रधान- डॉ० धीरज सिंह जी की अध्यक्षता में सम्पन्न होगी। एजेण्डा एवं विस्तृत कार्यक्रमों की रूप-रेखा सभी को डाक द्वारा भेज दी गयी है। कृपया समय से उपस्थित होकर अधिवेशन को सफल बनायें। आर्य समाज शवायजपुर हरदोई से फर्रूखाबाद के रास्ते सड़क पर पड़ता है।

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
सभा मन्त्री

डॉ. धीरज सिंह
कार्यवाहक प्रधान/संरक्षक

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

सम्पादकीय.....

कश्मीर की पीठ पर चीन का हाथ है

पाकिस्तान की पीठ पर चीन का हाथ है यह किसी से छिपा हुआ नहीं है। लेकिन यह पहली बार है जब कश्मीर की मुख्यमंत्री कश्मीर की हिंसा के पीछे चीन की लिप्तता की बात सार्वजनिक तौर पर कही है। जम्मू कश्मीर की मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती के इस आरोप को इस लिए बेहद गम्भीरता से लेना चाहिए।

उन्होंने कहा कि कश्मीर की समस्या कानून व्यवस्था की समस्या नहीं है बल्कि यह युद्ध है जिसमें बाहरी ताकतें शामिल हैं, और चीन भी इसमें हाथ डाल रहा है महबूबा मुफ्ती ने यह बात ऐसे समय कही है कि जब न केवल दो कलम में भारत और चीन की सेना के बीच गतिरोध लम्बा खिच गया।

पिछले दिनों चीन परोक्ष रूप से धमकी भी दी कि भारत द्वारा भूटान का पक्ष लेने के जवाब में वह कश्मीर मामले में दखल दे सकता है हलांकि पाकिस्तान की आर्थिक कारीडोर का निर्माण जिन इरादों के साथ कर रहा है उसके पीछे भारत पर नजर रखने की उसकी मन्सा है पाकिस्तान आतंकी सरगना मसूद अजहर को अन्तर्राष्ट्रीय आतंकी घोषित करने की भारत के इरादों पर पानी फेरना लश्कर समेत पाकिस्तान प्रयोजित दूसरे आतंकी संगठनों द्वारा चीन की ताकत को स्वीकरना आखिर क्या सूचित करता है।

पाकिस्तान की दोस्ती सिर्फ राजनीतिक आर्थिक और सैन्य मदद ताकत ही सीमित है विगत अक्टूबर में कश्मीर में आतंकियों के खिलाफ अभियान चलाने के दौरान सेना को चीनी झण्डे भी मिले। अभी तक कश्मीर में हम पाकिस्तान साजिसों का मुकाबला कर रहे थे लेकिन चीन भी इस मोर्चे पर गुपचुप तरीके से पाकिस्तान की मदद कर रहा है।

यह हमारे लिए सजग होने का समय है ऐसे में कश्मीर में हमें सूझ–बूझ के साथ कदम उठाना होगा। कश्मीर के भोले भाले युवाओं को यह बात समझनी होगी की देश हमारा है और हमें देश के लिए समर्पित होना चाहिए। जो ताकतें पैसा देकर गुमराह कर रही हैं उन्हें समझना पड़ेगा कि आतंक किसी का मित्र नही हो सकता। उन युवाओं को घुमराह करने वाली ताकतों से सभल कर रहना होगा, हमारे देश के सैनिको के साथ कंधे से कंधा मिला कर साथ चलना होगा। उनका सहयोग करना होगा तभी जाके धरती का स्वर्ग जिसे हम कश्मीर कहते हैं, उसमें अमन और शान्ति होगी।

– सम्पादक

गतांक से आगे .....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ चतुर्थ समुल्लासारम्भः

अथ समावर्त्तनविवाहगृहाश्रमविधिं वक्ष्यामः

महान्त्यपि समृद्धानि गोऽजाविधनधान्यतः।

स्त्री सम्बन्धे दशैतानि कुलानि परिवर्जयेत्।।१।। मनु०।।

चाहे कितने ही धन, धान्य, गाय, अजा, हाथी, घोड़े, राज्य, श्री आदि से समृद्ध ये कुल हों तो भी विवाह सम्बन्ध में निम्नलिखित दशा कुलों का त्याग कर दे।।१।।

हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम।

क्षय्यामयाव्यपस्मारिश्वित्रिकुष्ठिकुलानि च।।२।। मनु०।।

जो कुल सत्क्रिया से हीन, सत्पुरुषों से रहित, वेदाध्ययन से विमुख, शरीर पर बड़े–बड़े लोम, अथवा बवासीर, क्षयी, दमा, खाँसी, आमाशय, मिरगी, श्वेतकुष्ठ और गलितकुष्ठयुक्त कुलों की कन्या वा वर के साथ विवाह होना न चाहिए, क्योंकि ये सब दुर्गण और रोग विवाह करने वाले के कुल में भी प्रविष्ट हो जाते हैं, इसलिये उत्तम कुल के लड़के और लड़कियों का आपस में विवाह होना चाहिये।।२।।

नोद्वहेत्कपिलां कन्यां नाऽधिकाङ्गी न रोगिणीम्।

नालोमिकां नातिलोमां न वाचाटान्न पिङ्गलाम्।।४।। मनु०।।

न पीले वर्ण वाली, न अधिकाङ्गी आर्थात् पुरुष से लम्बी चौड़ी अधिक बलवाली, न रोगयुक्ता, न लोमरहित, न बहुत लोमवाली, न बकवाद करनेहारी और भूरे नेत्रवाली।।३।।

नर्क्षवृक्षनदीनाम्नीं नान्त्यपर्वतनामिकाम्।

न पक्ष्यहिप्रष्यनाम्नीं न च भीषणनामिकाम्।।४।। मनु०।।

न ऋक्ष अर्थात् अश्विनी, भरणी, रोहिणीदेई, रेवती बाई, चित्तारी आदि नक्षत्र नाम वाली, तुलसिया गेंदा, गुलाब, चम्पा, चमेली आदि वृक्ष नामवाली, गङ्गा, जमुना आदि नदी नामवाली, चाण्डाली आदि अन्त्य नामवाली, नागी, भुजंगा आदि सर्प नामवाली, माधोदासी, मीरादासी आदि प्रेष्य नामवाली और भीमकुअरि, चण्डिका, काली अदि भीषण नामवाली कन्या के साथ विवाह न करना चाहिये क्योंकि ये नाम कुत्सित और अन्य पदार्थों के भी हैं।।४।।

अव्यङ्गाङ्गीं सौम्यनाम्नीं हंसवारणगामिनीम्।

तनुलोमकेशदशनां मृद्वङ्गीमुद्वहेत्स्त्रियम्।।५।। मनु०।।

जिस के सरल सूधे अङ्ग हों विरुद्ध न हों, जिस का नाम सुन्दर अर्थात् यशोदा, सुखदा आदि हो, हंस और हथिनी के तुल्य जिस की चाल हो, सूक्ष्म लोम केश और दांत युक्त और जिस के सब अंङ्ग कोमल हों वैसी स्त्री के साथ विवाह करना चाहिए।।५।।

प्रश्न – विवाह का समय और प्रकार कौन सा अच्छा है?

उत्तर– सोलहवें वर्ष से लेके चौबीसवें वर्ष तक कन्या और २५ पच्चीसवें वर्ष से ले के ४८वें वर्ष तक पुरुष का विवाह समय उत्तम है। इस में जो सोलह और पच्चीस में विवाह करें तो निकृष्ट, अठारह बीस वर्ष की स्त्री तथा तीस पैंतीस वा चालीस वर्ष के पुरुष का मध्यम, चौबीस वर्ष की स्त्री और अड़तालिस वर्ष के पुरुष का विवाह उत्तम है। जिस देश में इसी प्रकार विवाह की विधि श्रेष्ठ और ब्रह्मचर्य विद्याभ्यास अधिक होता है वह देश सुखी और जिस देश में ब्रह्मचर्य, विद्याग्रहणरहित बाल्यावस्था और अयोग्यों का विवाह होता है वह देश दुःख में डूब जाता है। क्यांकि ब्रह्मचर्य विद्या के ग्रहणपूर्वक विवाह के सुधार ही से सब बातों का सुधार और बिगड़ने का बिगाड़ हो जाता है।

प्रश्न – **अष्टवर्षा भवेद् गौरी नववर्षा च रोहिणी।**

दशवर्षा भवेत्कन्या तत ऊर्ध्वं रजस्वला।।१।।

माता चैव पिता तस्या ज्येष्ठो भ्राता तथैव च।

त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्।।२।।

ये श्लोक पाराशरी और शीघ्रबोध में लिखे हैं। अर्थ यह है कि कन्या आठवें वर्ष गौरी, नवमे वर्ष रोहिणी, दशवें वर्ष कन्या और उस के आगे रजस्वला संज्ञा हो जाती है।।१।। इसवें वर्ष तक विवाह न करके रजस्वला कन्या को माता–पिता और भाई ये तीनों देख के नरक में गिरते हैं।।२।।

उत्तर– ब्रह्मोवाच–

एकक्षणा भवेद् गौरी द्विक्षणेयन्तु रोहिणी।

त्रिक्षणा सा भवेत्कन्या ह्यत ऊर्ध्वं रजस्वला।।१।।

माता पिता तथा भ्राता मातुलो भगिनी स्वका।

सर्वे ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्।।२।।

अर्थ– जितने समय में परमाणु एक पलटा खावे उतने समय को क्षण कहते हैं। जब कन्या जन्में तब एक क्षण में गौरी, दूसरे क्षण में रोहिणी, तीसरे में कन्या और चौथे में रजस्वला हो जाती है।।१।। उस रजस्वला को देख के उसकी माता, पिता, भाई, मामा और बहिन सब नरक को जाते हैं।।२।।

क्रमशः अगले अंक में .....

धरोहर....

वंदेमातरम् के अमर रचयिता : बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय

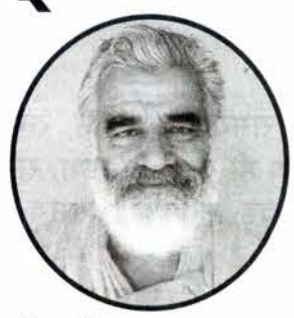

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री, आर्य प्रतिनिधि सभा
उ०प्र०, लखनऊ

वन्दे मातरम्–एक ऐसी मनमोहक आवाज है जिसे सुनकर प्रत्येक भारतीय एवं देशभक्त का हृदय श्रद्धा एवं सम्मान से भर जाता है वह मस्ती में सुनता है गाता है और भारत माता के प्रति अपनी निष्ठा की अभिव्यक्ति करना है। जिस महापुरूष ने उस गीत की रचना की उसके विषय में जानने की इच्छा स्वतः बलवती हो जाती है। नेता जी सुभाष चन्द्र बोस ने जिस पुण्य धरा को पवित्र किया उसी पुण्य धरा पर श्री बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय जी ने भी जन्म लेकर पवित्र किया। आपने कितना सुन्दर चिन्तन और मनन किया एक–एक शब्द हृदय को प्रभावित सुन्दर चिन्तन और मनन किया एक–एक शब्द हृदय को प्रभावित करता है बाल्यावस्था से लेकर आपकी पढ़ाई जिन गुरूजनों के माध्यम से हुई वे भी धन्य एवं अमर हो गये। उनका प्रयास प्रशंसनीय रहा ऐसे देशभक्तों को पाकर भारतमाता भी धन्य हो गई। ऐसी माँ के लाल भी धन्य हो गए माता–पिता के संस्कार भी सार्थक हो गए और उनकी विद्या भी सार्थक हो गई–

वन्दे मातरम् इस वंदनीय गीत की रचना अक्षयनवमी अर्थात् कार्तिक शुक्ल नवमी (७.११. १८७५) के दिन बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने की। भारतीयों के प्रेरित करने वाले, स्वतंत्रता संग्राम में प्रेरणादायी बने वंदे मातरम् के सदर्भ में जानकारी प्रस्तुत है।

'वंदे मातरम्' की उत्प्रेरणा और मार्गक्रमण–

अनेक प्रमाणों द्वारा अब सिद्ध हुआ है कि, 'वंदे मातरम्' यह गीत नवंबर १८७५ में रचा गया। 'आमार दुर्गोत्सव' तथा 'एकटी गीत' ये बंकिमचन्द्र के दो लेख और कमलाकान्तेर ऐसो यह पूर्णचन्द्र चटोपाध्याय जी का लेख, इन तीनों लेखों के आधार पर वर्ष १८७५ की दुर्गापूजा में अष्टमी की रात्रि बंकिमचन्द्र जी को भारतमाता के दर्शन हुए होंगे। उन्हीं के शब्दों में विहार कर रहा था। मैंने क्षितिज के छोर पर अत्यंत दूर लहरों पर देखा, तो मातृदेवता की स्वर्णमूर्ति थी। हाँ, वही मेरी माता, मेरी मातृभूमि थी। भूमि के रूप में माता, पृथ्वी के रूप में असंख्य रत्नों से अलंकृत। उसकी रत्नजड़ित दशभुजाएं दसों दिशाओं में फैली हुई थी। उन दसों भुजाओं में विविध शस्त्र और अस्त्र विभिन्न शक्तियों के यप में चमक रहे थे। उसके पैरों तले शत्रु छिन्न–भिन्न और हीन–दीन होकर कुचला गया था। उसका शक्तिशाली वाहन सिंह उसके चरणों के समीप ही शत्रु को खींचकर नीचे गिराता हुआ दिखाई दे रहा था। अरिमर्दिनी सिंहवाहिनी माते, तुम्हें मेरा प्रणाम 'वंदे मातरम्'।

मन की ऐसी उन्नत भावावस्था में बंकिमचन्द्र जी ने यह गीत लिखकर पूरा तो किया, परन्तु उस काल में अधिकांश लोगों को वह जचा नहीं। बंकिमचन्द्र जीके घर अनेक लेखक मित्र अपने अपने नीवन लेखन के विषय में चर्चा करने हेतु एकत्र आते थे। इस गीत पर भी भली चर्चा हुई।

किसी ने कहा कि इसमें श्रुतिमाधुर्य नहीं, तो किसी ने कहा, ''इसका व्याकरण बिगड़ गया है। 'सस्य शामलाम्' 'भुजैधृत, द्वित्रिंशत्काटी जैसे शब्द रसहानि कर हरे है। इतना अच्छा गीत है, परन्तु आधा बंगाली और आधा संस्कृत भाषा में लिखकर पूरा बिगाड़ दिया है।

बंकिमचन्द्र जी ने उनसे इतना ही कहा कि, आपको न भाया हो, तो मत पढ़िए। मुझे तो अच्छा लगता है, क्या भाता है, इसी का विचार कर क्या मैं लिखूँ? उसी कालावधि में वे और उनके बड़े बंधु सजीवचंन्द्र 'बंगदर्शन' के संपादक थे। 'बंगदर्शन' की नवीन पत्रिका के मिलान का काम अंतिम स्तर पर था, तब उससे कुछ स्थान शेष था।

बंकिमचन्द्र जी के पटल के खण्ड में (दराज में) रखी कविता की व्यवस्थापको ने परिशिष्ट के रूप में माँग की। कुछ रुष्ट होकर ही उन्होंने कविता देने के लिए हा की। एक बार उनकी बेटी ने भी बताया लोगों को यह गीत कुछ भाया नहीं। मुझे भी अधिक नहीं भाया नह। उन्होंने कहा, ''यह कविता अच्छी है अथ्वा नहीं, इसका पता अब नहीं चलेगा, कुछ समयोपरांत उसका महत्त्व लोगा को समझ में आएगा। उस समय कदाचित मैं जीवित भी न रहूँ परन्तु आप रहेंगे। एक दिन ऐसा आएगा के पूरे देश और देशवासियों के मुख में यह गीत वेद मंत्र समान होगा।''

यथार्थ में वैसा ही होना था। केवल ५६ वर्ष की आयु में १४–१५ उपन्यास गद्य लेखन के कुछ ग्रंथ, कविता संग्रह और वंदे मातरम् यह महामंत्र भारतवासियों के लिए छोड़ कर बंकिमचन्द्र स्वर्ग सिधार गए। उनकी पूरी आयु में गीत की धुन बनाने स्वर लेखन करने जैसी बातें हुई अवश्य, परन्तु खरे अर्थ में वर्ष १८९३ में कलकत्ता (आज का कोलकाता) में हुए कांग्रेस के अधिवेशन में उनका कार्य लोगों के सामने आया। खुले अधिवेशन में गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर ने उसे गाया, परन्तु उसके ६ वर्ष उपरान्त ही बंगाल के विभाज के समय वह जनमानस में घर करने लगा।

प्रशासकीय सुविधाओं के लिए किया गया विभाजन इतना महगा पड़ेगा, ऐसा लॉर्ड कर्जन ने सोचा भी न था। वर्ष १९०७ में अरविंद घोष ने लिखा कि बंगाल के लोग विभाजन के प्रति उदासीन थे। जब वे प्रेरणा के लिए यहाँ–वहाँ देख रहे थे, तब उसी मंगलक्षण किसी ने वंदे मातरम् कहा। लोगों को मंत्र मिल गया और एक ही दिन से पूरा राष्ट्र ''देशभक्ति नामक धर्म का अनुयायी बन गया। 'उत्तिष्ठ, जाग्रत' (उठो जागो) ऐसा संदेश 'वंदे मातरम् ने दिया। धार्मिक संकल्पनों से देशभक्ति, मागल्य और मातृपूजन की भावमानस जोड़ते हुए एक महान मंत्र बंकिमचंद्र जी ने राष्ट्र को दिया।

भारतीयो को प्रेरित करने वाले 'वंदे मातरम्' पर बंदी लाने वाला ब्रिटिश शासन–

वंदे मातरम ये शब्द केवल बंगाली लोगो के होंठो पर ही नहीं, अपितु चूड़ियों की कलाकृति में (नक्काशी में), कुर्ते और साड़ियों के छोरों पर (किनारों पर) तथा दिया सलाई के वेष्टनों पर (कवर पर) भी दिखाई देने लगे। यह गीत राष्ट्रीय गीत के रूप में सर्वत्र गया जाने लगा। उसकी बढ़ती लोकप्रियता के कारण वर्ष १९०८ के आसपास ब्रिटिश और फ्रांसीसी ग्रामोफोन के आसथापनो ने (कंपनियों ने) धावा बोलकर इन प्रतिष्ठानों की अधिकांश सामग्री नष्ट की। दुर्भाग्य से रविद्रनाथ जी की ध्वनि मुद्रिकाओं को छोड़कर इस आरंभिक काल में किया गया अन्य सर्व ध्वनिमुद्रण नष्ट हुआ है।

'केवल दो ही शब्दों वाले इन मंत्रवत् अक्षरों की जादू और मोहिनी इतनी थी कि सर्व प्रकार की बंदी एवं बंधनों को नकार कर यह गीत बंगाल से बाहर निकलकर देशभर बन गया। सर्वाजनिक सभाएं, सम्मेलन, आंदोलन और संग्राम, चलचित्र के गीत एवं नाट्यपद के कार्यक्रम (महफिलें), वाद्यवृंद का गायन जैसे अनेकानेक माध्यमों द्वारा निरंतर लोगों के बीच यह गीत गाता–बजाता रहा। स्वतंत्रता पूर्व काल में अनेकों ने यह गीत मुद्रित कर रखा। स्वतंत्रता संग्राम में 'वंदेमातरम्' यह प्रेरक घोषणा बनी, तो क्रांतिकारियों के मुख में वह सांकेतिक शबद बन गया। कांग्रेस के प्रथम ध्वज पर 'वंदे मातरम्' अक्षर लिखे जाते थे आज जो पार्टी इस गीत से परहेज कर रही है वह एक मूल मन्त्र बन गया।

प्रत्येक देशभक्त के हृदय में अपना स्थान बना लिया। आज भी कुछ लोगों को छोड़कर सभी देशवासी इसका उतना ही सम्मान करते हैं जैसा उनके समय में होता था। अभिवादन की तरह विशेष प्रतीक बनकर एकात्मता का भाव पैदा करने वाला यह गीत अमर हो गया इसके रचयिता भी अमर हो गए–सूर्य–चन्द्र की तरह सदैव प्रेरणा–प्रदान करने वाला यह गीत आने वाली भावी पीढ़ी में भी देश भक्ति का भाव पैदा करता रहे साम्प्रदायिक शक्तियाँ प्रभावी न होने पावे ऐसा प्रयास हम सभी आर्यों को करना चाहिए। मैं स्वतन्त्रता दिवस की पूर्व बेला में ''वन्दे मातरम्'' के रचयिता के प्रति अपना सम्मान प्रकट करताह हुआ प्रत्येक देशभक्त से आशा करूँगा कि जैसे प्रभु की सृष्टि देखकर प्रभु को याद करते हैं वैसे ही गीत के रचनाकर के प्रति सभी देशवासी उनका स्मरण करते हुए देश भक्ति का संकल्प लेगें ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। ''वन्दे मातरम्''।

गुरूकुल पूठ
हापुड़

युवा पीढ़ी के लड़खड़ाते कदम

(दिशाहीन शिक्षा में दोषी हैं आप और हम)

-धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
सभा मंत्री

समय बलवान् है, समय ऐसा ही चल रहा है, समय ही ऐसा आ गया, समय को देख जो नहीं बदला वह मूर्ख है। समय की पहिचान करना बुद्धिमानी है। कलियुग में यही होना था। कलियुग में सब सम्भव है। जमाना ही खराब है माँ–बाप क्या करें? समय–समय पर इस प्रकार की चर्चा करते हुए आज सर्वत्र पुरानी पीढ़ी के लोगों को अपनाया पराया भाग्य कोसते देखा और सुना जा रहा है। प्रत्येक व्यक्ति निराशा के भाव लिए समय और जनता को दोषी बता रहे है। कारण कोई अन्य भी हो सकता है परन्तु स्वयंसिद्धम् अन्तसर्वसिद्धम्। मैं ठीक अन्य सब खराब हैं सुधार की भी कोई सम्भावना शेष नहीं है ऐसी बातों में प्रायः दूसरे साथियों को भी अपनी बात स्वीकार कराने के लिए पूरे जोर लगाये जाते हैं। इससे वातावरण प्रतिदिन कमजोर एवं प्रदूषित होता जा रहा है। पुराने समय से चली आ रही परम्पराओं में परिवर्तन हो रहे हैं। प्रत्येक क्षेत्र में प्राचीन संस्कृति के अभाव से पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव बढ़ रहा है। इसीलिए परिवार, समाज, राष्ट्र कमजोर होते जा रहे हैं। परिवरों में भाई–भाई के प्रति प्यार, विश्वास समाप्त हो गया । स्वार्थ हृदय में स्थाई भाव से कब्जा कर परोपकारी विचारों को इहरने की अनुमति प्रदान नहीं करता। अतः प्रतिदिन विवाद ही आबाद हो रहे हैं। परिवार बरबाद हो रहे हैं। अपवाद है जहाँ वैदिक संस्कृति और सभ्यता जीवित है। शेष सब अपनी अर्थी सजाये बैठे हें। उसे उठाने वाला भी कोई नहीं है। किसी भी समस्या को आप देखें तो पता चलता है कि इसमें भी कोई रातनीति कर रहा है। धर्मनीति से राष्ट्र को बनाने का और दुर्भाग्य से बचाने का स्वप्न निर्मूल हो रहे हैं। परिवार एक संगठन का प्रतीक है छोटे–बड़े, खरे–खोटे, वृद्ध–युवा सभी की भावनाओं के सम्मान को बढ़ाने का नाम परिवार है। उसकी परिभाषा काल–स्थान, भाव विशेष से घटती बढ़ती रहती है। एकाकी व्यक्ति भी अपने बच्चे के साथ रहने को परिवार की संज्ञा देता है। दस–बीस व्यक्ति व्यक्तियों से लेकर पिरवार को कितना भी बढ़ाया जा सकता है। हमारी वैदिक संस्कृति में तो ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' कहकर पूरी दुनियाँ को ही एक परिवार का रूप दे दिया। यह है महानता का सच्चा और सुन्दर उदाहरण। दुनियाँ में और कहीं नहीं हो सकता। इसीलिए इस देश को विश्व गुरु की उपाधि प्राप्त हुई तथा इस संस्कृति को वेद में कहा गया–''सा संस्कृति प्रथमा विश्ववारा'' अर्थात् यह संस्कृति पूरी दुनियाँ में सबसे पुरानी है। यह उदारता कहाँ से आई? शिक्षा किसने दी? महानता प्राप्त करने का सन्देश कैसे मिला?

अयंनिजः परोवा इति गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरित्रानां तु वसुधा एवं कुटुम्कम्।।

बारबार महान् बनने के लिए इसीप्रकार के संस्कार बच्चों में शिक्षा के रूप में संस्कारों के रूप में समय–समय पर पूर्वज देते रहे। उसका परिणाम सुखद रहा। आत्मीयता रही दूसरों की सेवा करने की भावना रही और वे बच्चे महान् बन गए। आज निराशा इसीलिए है कि प्रत्येक व्यक्ति समय को दोष दे रहा है और पुनरावृत्ति करते–करते गाय के बच्चे को बकरी बना दिया। घिसते–घिसते घोड़ा खरगोश बन गया है। अतः समय को दोष न देकर समय–सयम पर सावधानी की आवश्यकता है। कलियुग को प्रारम्भ हुए ५१२२ वर्ष का समय हो गया है अभी चार लाख सत्ताईस हजार वर्ष और शेष हैं। इस कलियुग में ही स्वामी महर्षि दयानन्द जी आये। अकेले कितना कार्य कर गए। महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, गुरू गोविन्द सिंह, बन्दा बैरागी जैसे कितने वीर महापुरूष आये वे भी समय को कोसने लगते तो सच बताओ इस संस्कृति की रक्षा सम्भव थी? कदापि नहीं। अतः ऐसा सोचना हमारे लिए सर्वधा हानिकारक है। आधुनिकता की दौड़ में अपनी सभ्यता और संस्कृति की रक्षा का ध्यान अवश्य रखो। आज पत्र–पत्रिकाओं में पढ़कर शर्म से सिर झुक जाता है जब सभी पवित्र रिश्ते दूषित हो गए। दूषित ही नहीं समाप्त हो गए। बेटा माँ को मार दे, माँ बेटे को मारकार नदी में बहा रही है। पिता–प्रभु, स्वामी–सेवक, भाई–बहिन सभी सम्बन्धों की स्थिति भयावह है। जहाँ वैदिक संस्कृति जीवित है आज वहाँ साक्षात् स्वर्ग है। मानवीय मूल्यों की सुरक्षा है और वही प्राचीन परम्परा है। अतः उसे जीवित करने के लिए जीवित को शक्तिशाली बनाने के लिए एवं उसे स्थाई बनाने के लिए शिक्षा एवं संस्कारों को सुरक्षित करना होगा जो हमारी प्राचीन गुरूकुल शिक्षा प्रणाली से ही सम्भव है। अतः समाज एवं राष्ट्र को शक्तिशाली बनाना है तो शिक्षा और संस्कार को सदैव सुरक्षित रखने का संकल्प लीजिये तभी आपका आपके परिवार का कल्याण सम्भव है। आर्य वीरदल इस दिशा में कुछ प्रयास कर रहा है। आपके घर जाकर आवाज देता है आओ अपने बच्चों को प्रतिदिन आर्य समाज मन्दिर की प्रातःकालीन अथवा सायंकालीन शाखाओं में भेजें, शिविरों में भेजें। घर पर प्रातःकाल उठकर स्वयं भी वैसा ही वातावरण बना सकते हैं। स्वामी रामदेव जी ने एक चमत्कार पैदा किया है–योगासन–प्राणायाम के प्रति रुचि पैदा की है। लोगों को स्वास्थ्य दिया है। आलस्य को भगाया है। अब प्रत्येक व्यकित स्वयं में अनुशासित रहकर यह अनुभव करने लगा है कि मैं स्वस्थ हूँ। मुझे अब जीवन जीने की शैली प्राप्त हो गई है। जो इसे उपेक्षित कर रहे हैं वे स्वयं ही समाज से उपेक्षित हो रहे हैं। अतः आज के समय को पहिचानो, आज के समय को सावधानी से सदुपयोग में लगाओ, समय पर किया हुआ कार्य सदैव लाभकारी होता है, सवादिष्ट भी होता है। समय पर चूक जाने वाला सदैव पश्चाताप करता है। समय के विषय में एक चित्रकार ने एक चित्र बनाया। व्यंगचित्र की तरह ही था। एक पक्षी और मनुष्य का रूप मिलाकर उसके पाँव के पास पंख लगे थे और उसका चेहरा आगे बालों से ढका हुआ था। पीछे से सिर गन्जा था। आजकल लोग आगे से गन्जे होते हैं। अतः लोगों ने प्रश्न किया कि यह चित्र रहस्यों भरा है। इसका अर्थ क्या हैं? समझाओ। तब चित्रकार ने बताया कि यह समय का चित्र है। आगे बाल इसलिए हैं कि इसे समय से पहले सावधानी पूर्वक पकड़ यिला तो पकड़ में आ जायेगा अन्यथा बदा में सिर गंजा है कितना भी प्रयास कर लेना कुछ हाथ नहीं लगेगा। फिर बताया कि पंख हैं उड़ जाता है समय एक बार निकल जाने के बाद फिर हाथ नहीं आता। अतः सावधानी की आवश्यकता है निराशा से नहीं आशावान् होकर प्रत्येक व्यक्ति अपने–अपने कर्त्तव्य को समझकर उसे पूरा करने में लगेगा तो सभी कार्य ठीक होंगे और आप अपने जीवन के लक्ष्य को पूरा कर सकेंगे अथवा दूसरों पर ही दोषारोपण करते रहेंगे। यह जुलाई का महीना शिक्षा–सत्र का नववर्ष है अतः नवीनता का संचार हमारे सभी के हृदयों में हो ऐसी प्रभु से प्रार्थना है।

शतपथ ब्राह्मण में अग्निहोत्र का विवेचन

डा. भवानी लाल भारतीय

यज्ञ की भावना का मूल वेदों में देखा जा सकता है। यजुर्वेद के अनुसार–यज्ञ रूपी परमात्मा का यजन–पूजन यज्ञ के द्वारा किया जाता है। भौतिक अग्निहोत्र की विधि का निर्माण भ वेद मंत्रों को यथा स्थान, यथा क्रिया में विनियुक्त कर ही किया गया। अग्न्याधाप के मंत्र ऋषि दयानन्द के यजुर्वेद के तृतीय अध्ययन से लिए हैं तथापि यज्ञ नैतिक मूल्यों का बाल्य प्रतीक ही है। सत्य और श्रद्धा वे मौलिक तत्व हैं जो यज्ञ के विधान में निहित हैं। इस आशय की एक आख्यायिका शतपथ ब्राह्मण तथा उपनिषदों में आये उपास्थान (आख्यायिकाएं) ऐतिहासिक भी हैं तो कुछ रूपकात्मक तथा प्रतीकात्मक हैं। विदेह जनक से जुड़े आख्यानों को ऐतिहासिक माना जाता है। अधिकांश में ये राजा तथा ऋषियों के संवाद रूप में हैं।

ऐसे ही आख्यान का आरम्भ जनक विदेह देश का राजा तथा ऋषि याज्ञल्क्य के संवाद रूप में शतपथ (११/३/१/२/४) में आया है। यह संवाद मूल तथा अर्थ सहित यहाँ दिया जा रहा है–

तद्वैतज्जनको वैदेहो याज्ञवल्क्यं पप्रच्छ। वेत्थाग्निहोत्र याज्ञवल्क्य इति।

हे याज्ञवल्क्य, क्या तुम अग्निहोत्र को जानते हो? याज्ञवल्क्य का उत्तर था–वेद सम्राडिति–हे सम्राट मैं जानता हूँ।

जनक किमिति–वह अग्निहोत्र क्या है। किस पदार्थ से किया जाता है? उत्तर पयएवेति। अर्थात् एक शब्द में कहें तो पय (दुग्ध) तथा उससे निकला घृत ही अग्निहोत्र का मुख्य साधन है।

जनक का प्रतिप्रश्न–**यत् पयो न स्यात् केन जुहुया इति।**

यदि दुग्ध (या घृत) न मिले तो कैसे अग्निहोत्र करें? उत्तर में ऋषि ने कहा–

व्रीहियवाभ्याम्मिति।

उस स्थिति में चावल और जौसे यज्ञ

शेष पृष्ठ ७ पर

राजा पर धर्म का अंकुश जरूरी है

महात्मा चैतन्यमुनि

राजा का जैसा चिन्तन और आचरण होगा वैसा ही उसकी प्रजा का भी होगा इसलिए हमारे मनीषियों ने राजा की नियुक्ति किए जाने पर विशेष ध्यान देने के आदेश दिए हैं। संसार में राजा के चुने जाने की बहुत सी प्रक्रियाएं प्रचलित रही हैं। कहीं–कहीं तो राजा स्वयं ही युद्ध द्वारा राज्य प्राप्त करता है मगर कई बार राजा की पीढ़ी दर पीढ़ी नियुक्ति की जाती है। मगर महर्षि दयानन्द जी आम जनता द्वारा राजा का चुना जाना उपयुक्त समझते हैं। प्रजातांत्रिक ढंग से यदि राजा का चुनाव होगा तो वह निरंकुश नहीं हो सकता है। महर्षि जी इस बारे में छठे समुल्लास में लिखते है– ''एक को स्वतंत्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए, किन्तु राजा जो सभापित तदधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा राजसभा के अधीन रहे। यदि ऐसा न करोगे तो राष्ट्रमेव विश्याहन्ति तस्याद्राष्ट्री विशं घातुकः। विशमेव राष्ट्रायाद्यां करोति तस्माद्राष्ट्री विशमति न पुष्टं पशुं मन्यत इति। (शत०का० १२.२.३) जो प्रजा से स्वतंत्र स्वाधीन रावर्ग रहे, तो राज्य में प्रवेश करके प्रजा का नाश किया करे। जिस लिए अकेला राजा स्वाधीन वा उन्मत्त होके प्रजा का नाशक होता है, अर्थात् वह राजा प्रजा को खाए जाता है, इसलिए किसी एक को राज्य में स्वाधीन न करना चाहिए। जैसे सिंह वा मांसाहारी हृष्ट–पुष्ट पशु को मारकर खा लेते हैं, वसे स्वतंत्र राजा प्रजा का नाश करता है, अर्थात् किसी को अपने से अधिक न होने देता, श्रीमान को लूट–घूंट अन्याय से दण्ड लेके अपना प्रयोजन पूरा करेगा। वेद के एक मंत्र (यजु० २०.८) से हमें राजा का प्रजा के साथ संबंधों का पता चलता है। राज्याभिषेक के समय राजा से मंत्र बुलाया जाता था–

पृष्टीर्म राष्ट्रमुदरमंसो, ग्रीवाश्च श्रोणी।
उरू अरत्नी जानुनी विशोऽमेगांनि सर्वतः।।

अर्थात् राजा कोई अलग वस्तु नहीं। राजा का शरीर राष्ट्र है और प्रजाओं से मिलकर बना है। राष्ट्र उसका पृष्ठ वंश है तथा नाना प्रकार की प्रजाएं उसके नाना अंग हैं। महर्षि व्यास जी ने भी कहा है– राजा प्रजानां हृदयं भरीयः प्रजाश्च राज्ञोऽप्रतिम शरीरम्। अर्थात् प्रजा राजा का शरीर है और राजा उसके शरीर में हृदय के समान है। कामन्दकाचार्य जी ने (नीतिसार ६–३) राज्य के सात अंग माने हैं जिनमें राजा को भी एक अंग ही कहा गया है। ब्राह्मण ग्रन्थों में आठ प्रकार के राज्यों का उल्लेख किया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण अध्याय आठ में लिखा है– स्वस्ति साम्राज्यं, भौज्यं, स्वराज्यं, वैराज्यं, पारमेष्ठेयं, राज्य, महाराज्यं, आधिपत्यममं समन्तपर्यायी स्यात्। सार्वभौमः सार्वामुषः आन्ताद् आपरार्द्धात्, पृथिव्यै समुद्रपर्यान्नाया एकराड् इति।। इन पंक्तियों में आठ प्रकार के राज्यों का विवेचन किया गया है जिनमें से एक स्वराज्य भी है। महर्षि दयानन्द जी ने इसी के महत्व को हमारे सामने रखते हुए इसे सर्वोपरि बताया है। वेद में भी स्वराज्य की प्रशंसा में कहा गया है–

यदजः प्रथमं सबमूय स ह तत् स्वराज्यभियाय।
यस्मान्नान्यत् परममस्ति भूतम्।। (अथर्व १०–७–३१)

वेद का यह मंत्र स्वराज्य की महिमा बताने वाला है। इसमें कहा गया है कि स्वराज्य से दूसरा और कोई श्रेष्ठ राज्य नहीं है। ऋग्वेद (५–६६–६, १–८०–१) में भी स्वराज्य को ही सर्वोपरि राज्य बताया गया है क्योंकि यह राज्य प्रजातंत्रीय पद्धति का ही प्रतीक है। वेद में हमें अनेक ऐसे मंत्र मिले हैं जिनमें प्रजातंत्र को ही अच्दी राज्य व्यवस्था बताया गया है। प्रजातंत्र पद्धति में ही राजा के प्रति पूर्णरूप से अंकुश रह पाता है। प्रजा को अत्याचारी ओर अन्यायी राजा को राज्य से च्युत करने की व्यवस्था हुआ करती थी। वाल्मीकीय रामायण (अध्याय ३३) में वर्णन है कि क्रोधी, कंजूस, मद्यपी, घमण्डी और धोखेबाज राजा की दुर्दिन में उसकी प्रजा सहायता नहीं करती है। वह न तो उसकी सेवा करती है न ही उससे डरती है। ऐसा राजा शीघ्र ही पदच्युत कर दिया जाता है। शतपथ ब्राह्मण (१२–६–३) में राजा को पदच्युत करके देश से निर्वासित कर देने का उल्लेख है। इसी प्रकार पुराने समस्त राजनीति के विद्वानों ने राजा की शक्तियों को सीमित रखने तथा उसके कामी, क्रोधी एवं अत्याचारी होने की दशा में पदच्युत करने का आदेश दिया है। महाभारत में किसी ऋषि से किसी ने पूछा–

यः पापं कुरूते राजा काममोहबलात्कृतः।
प्रत्यासन्नतस्यर्षे! किं स्यात्पापप्रमाशनम्।।

अर्थात् हे ऋषे! जो राजा काम और मोह के वशीभूत होकर पाप करता है उसके लिए क्या करना चाहिए? ऋषि इसका समाधान बताते हैं–

दुराचारान् यदा राजा प्रदुष्टान्न नियच्छति।
तस्मादुद्विजते लोकः सर्पाद्वेश्मगंतादिव।।
तं प्रजातानुवर्वन्ते ब्राम्हण न च साधवः।
ततः संशयमाप्नोति तथा बध्यत्वमेव च।।

अर्थात् जब राजा दुराचारी हो जाए और समस्त प्रजा उससे ऐसे तंग हो जाए जैसे घर में आए सांप से हो जाती है तो समस्त प्रजाओं, ब्राह्मणों तथा सन्यासियों को उचित है कि उसकी आज्ञाओं का पालन न करें तथा अन्त में उसे मार ही डालें... महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में कहते हैं कि कामी राजा और न्यायाधीश भी दण्डित किए जाने चाहिए। इस संबंध में वे लिखते हैं– प्रश्न– जो राजा वा रानी अथवा न्यायधीश वा उसकी स्त्री व्यभिचारादि कुकर्म करे, तो उसको कौन दण्ड देवे?

उत्तर– सभा। और उनको तो प्रजापुरूषों से भी अधिक दण्ड होना चाहिए।

प्रश्न–राजादि उनसे दण्ड क्यों ग्रहण करेंगे?

उत्तर– राजा भी एक पुण्यात्मा, भाग्यशाली मनुष्य है। जब उसी को दण्ड न दिया जाए, और वह दण्ड ग्रहण न करे तो दूसरे मनुष्य दण्ड को क्यों मानेंगे? और जब सब प्रजा और प्रधान राज्यधिकारी और सभा धार्मिकता से दण्ड देना चाहे, तो अकेला राजा क्या कर सकता है? जो ऐसी व्यवस्था न हो तो राजा, प्रधान ओर सब समर्थ पुरूष अन्याय में डूबकर न्याय धर्म को डुबोके सब प्रजा का नाश कर आप भी नष्ट हो जाएं, अर्थात् उस श्लोक के अर्थ का स्मरण करो कि, न्याययुक्त दण्ड ही का नाम राजा और धर्म है जो उसका लोप करता है, उससे नीच पुरुष दूसरा कौन होगा?

राजा को धर्म का ही प्रतीक माना गया है इसलिए उसका धार्मिक होना अर्थात् उस पर धर्म और न्याय का अंकुश होना बहुत जरूरी है। इसके लिए राजा के कार्यकलापों में धार्मिक नेता पुरोहित की अहम भूमिका हुआ करती थी। राजा का राज्याभिषेक करती बार राजा को राजा बनाने के लिए अन्य लोगों में पुरोहित भी होता था और उस समय राजा को एक पलाश वृक्ष की शाखा दी जाती थी। इस शाखा को 'पर्ण' और 'मणि' कहा जाता था। यही राज्य की थाती का सांकेतिक चिन्ह था। इस थाती को देने वालों को 'रत्नी' संज्ञा दी जाती थी। वह इनका आदर सत्कार कर के पृथ्वी माता या राष्ट्र माता की अनुमति प्राप्त करता था। और उसके बाद अनेक नदियों के मिश्रित जल से स्नान करने के बाद राजचिन्हों को धारण करके प्रतिज्ञा करता था –''यदि मैं प्रजा से द्रोह करूं तो अपने जीवन, अपने पुण्य फल, अपनी संतान आदि सबसे वंचित किया जाऊँ। राजा के सिंहासन पर बैठने के बाद पुरोहित जल छिड़कते हुए कहता था –''देवताओं, अमुक बात के बेटे और अमुक विशः के अमुक राजा को राजशक्ति के लिए दृढ़ बनाओ और जन राज्य के लिए इसे शत्रु रहित करो।' इसके बाद पुरोहित राजा की पीठ पर राजदण्ड से हल्की चोट करता था जिसका भाव था कि राजा भी दण्ड से रहित नहीं है। पुरोहित के महत्व को दर्शाने के लिए कहा गया है–

दैवाधीनं जगत्सर्वम् मन्त्राधीनाश्च देवताः।
ते देवा ब्रह्मधीनास्तस्मात् ब्रम्होव सर्वम्।।

सारे जगत का प्रशासन देवताओं (नेताओं) के अधीन है। ये देवता मन्त्रणा पद्धति के अधीन हैं। यह पद्धति ब्राह्मण के अधीन है, अतएव ब्राह्मण (पुरोहित) ही शासन का सर्वप्रथम स्रोत है। शतपथ (५.३.१.१२) के अनुसार राज्याभिषेक के समय पुरोहित ही राज्य शक्ति के प्रतीक के रूप में एक खड्ग सर्वप्रथम राजा को देता था। ऐतरेय ब्रा० (८.२५) में कहा है कि देवता राजा द्वारा प्रस्तुत अन्न को बिना पुरोहित के नहीं खाता। श०ब्रा० (१.४.६) में तो यहा तक कहा है कि बिना पुरोहित के राजा की कल्पना तक नहीं का जा सकती। ऋ० (१.१२६.४) के अनुसार तो पुरोहित का एक कार्य युद्ध क्षेत्र में जाकर राजा को प्रोत्साहित करना तथा शत्रुओं पर बाणों की वर्षा करना भी बताया है। पुरोहित धर्म का मर्मज्ञ होता था और चाहे युद्ध हो चाहे शांति उसका कर्तव्य था कि वह राजा को धर्म का मार्ग बताए। पुरोहित ज्ञान और धर्म से इतना परिपूर्ण होता था कि अथर्व (३.१६.१, २, ३) के मंत्रों में उसके द्वारा घोषणा की जाती है कि –''जिनका मैं पुरोहित हूँ उनके लिए मेरा यह ज्ञान उनका बल और वीर्य को बढ़ाने वाला होवे। मैं न केवल राजप्रमुख को बल्कि सारे राष्ट्र को ओज, वीर्य, बल से तैयार करता हूँ ताकि वे शत्रु के बाहुबल को विदीर्ण कर सकें। जो शत्रु हम पर युद्ध लादते हैं (मैं ब्राह्मण) अपने ज्ञान से उन विपक्ष वालों को नीचे गिराता हूँ और अपने पक्ष वालों को उन्नत करता हूँ। इस प्रकार हम देखते हैं कि राज्य व्यवस्था को चलाने के लिए तथा धर्म को उसका आधार बनाने के लिए धार्मिक विद्वान की बहुत अधिक अनिवार्यता थी तथा उस पुरोहित द्वज्ञरा ही राजा को उसके कर्तव्यों का निर्देश देते हुए राजगद्दी पर बैठने से पूर्व विधिवत् शपथ दिलाई जाती थी। उसे बार–बार प्रजा के हित के लिए परोपकार और धार्मिक भावना एवं पूर्ण न्याय के साथ राज्य चलाने का आदेश दिया जाता था। वेदों में इस प्रकार की प्रक्रियाओं का विशद विवेचन है–

इमं देवा असपत्न सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्दियाय।(यजु०) ०६. ४०) पुरोहित संसद सदस्यों से प्रार्थना करता है कि राजा को बड़े क्षात्र धर्म के लिए, बड़े ऐश्वर्य के लिए, बड़े जन राज्य के लिए तथा राजकीय पराक्रम और शत्रुरहितता के लिए अभिषिक्त करो। वह आगे शपथ दिलाते हुए कहता है–

आ त्वाहार्ष्मन्तरेधि ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः।
विशस्त्वा सर्वा वाच्छन्तुमा त्वदाष्ट्रमधि भ्रशत्।।
(ऋ० १०.१७३.१)

हे राजन्! मैं तुझे लाया हूँ अन्दर आ और स्थिर रहकर राज्य का संचालन कर। तुझे समस्त प्रजाजन सदा चाहते रहें और तुझसे राष्ट्र न गिरे। आगे और भी महत्वपूर्ण आदेश देते हुए वह पुनः कहता है–

भूभुर्वः स्वःसुप्रजाः प्रजाभिः स्यांऽसुवीरो वीरेः सुपोषः पोषैः।
नर्य प्रजां मे पाहि शंऽस्य पशून्मे पाह्यथर्य पितुम्मे पाहि।। (ऋ० १०.१.७३)
आ त्वा गन् राष्टं सह वर्चसोदिहि प्राड्. विशां पतिरेकराट् त्वं विराज।
सर्वास्त्वा राजन् प्रदिशो ह्वयन्तूपसद्यो नमस्यो भवेह।।
त्वां विशी वृणतां सत्याय त्वामिमाः प्रदिशः पंच्चदेवीः।
वर्ष्मन् राष्टस्य ककुदि श्रयस्व ततो न उग्रो वि भजा वसूनि।। (अथर्व ३.४.१,२)

प्रजा की ओर से कहा जाता है कि हे तीनों लोकों के नर श्रेष्ठ राजा! तुम्हारे माध्यम से हम प्रजाजनों का कल्याण हो। तुम युद्ध में हमारे शत्रुओं से

शेष पृष्ठ ८ पर

पारिवारिक एकता के तत्व

आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री

संसार में एकसा कौन है जो शान्ति नहीं चाहता। बड़े–बड़े राष्ट्र जिनकी संसार में धाक है, दबदबा है, शान्ति के लिए उत्सुक रहते हैं। शान्ति चाहने वालों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि शान्ति पहले घर में परिवार में होनी चाहिए। घर में कलह हो, मुँह से शान्ति की बात हो तो यह सब अर्थहीन सा लगता है। एक महान विचारक का कथन – ''घर में शान्ति और व्यवस्था के अभाव में, राष्ट्रों के बीच शान्ति की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती।'' इस कथन में यह सन्देश छिपा है कि पारिवारिक शान्ति ही चाहिए तो सभी छोटे–बड़े देशों को अपने छोटे स्वार्थों को भूलकर, विश्व शान्ति के हित में सहयोग करना चाहिए। परिवार भी तो विश्व का लघु रूप है। प्रत्येक परिवार का मुख्या होता है। अपनी पारखी योग्यता, गहरे अनुभव संभाले और एक जुट रखने की योग्यता के कारण वह हमसे सम्मान और आदर पाता है– ऐसा कर हम उसके अहं को सन्तुष्ट नहीं करते। ऐसा हम इसलिए करते हैं क्योंकि वह परिवार के सम्मान और उसकी प्रतिष्ठा का प्रतीक है।

परिवार के सम्मान् और प्रतिष्ठा को यदि हम अपना पूज्य देव मानें तो हम सभी सदस्यों का प्रेम भाव उसकी उपासना है, इसमें प्रत्येक सदस्य का योग इस माला में पिरोया एक मनका है, हाँ योग्य सदस्य के मनका हो तभी माला में गूँथा यह मनका माला के लिए उपयोगी हो सकता है। परिवार के प्रबन्ध की जिसके हाथ में बागडोर हो, वह चरित्र और व्यवहार की दृष्टि से दूसरों के लिए एक आदर्श उदाहरण होना चाहिए। अनुशासन में वही रख सकता है, जिसमें सहने की शक्ति हो। जो स्वयं बुरी लत में फंसा हो, अवगुणों की कीचड़ में धसा हो, वह परिवार की प्रतिष्ठा का प्रतिनिधि कैसे हो सकता है। बुरे मत से बुरी लत पड़ती है। जहाँ यह लत हो, वहाँ परिवार की गत होती नही है, हाँ बनती जरूर है।

परिवार की एकता में बड़ों का विशेष दायित्व है। छोटे–बड़ों का आदर करें, उकने अनुभव, योग्यता से सीखें और उनके गुण अपने में लाने का यत्न करें, इससे किसे इन्कार है? पर दूसरी ओर यदि बड़े, बड़प्पन में यह समझें कि छोटे इतने छोटे हैं कि उनकी राय की किसी स्थान पर अपेक्षा नहीं है, उनकी उपेक्षा ही करना चाहिए, तो पाठक इस विचार से सहमत होंगे कि बड़े अपना परिचय इस रूप से दे रहे हैं कि वह छोटों के हित में है, पर साथ ही इस सच की भी हम उपेक्षा नहीं कर सकते कि बड़ों का बड़प्पन छोटों के कारण है और उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि बड़ों के लिए छोटों के प्रति उचित, अनुचित सब कुछ कहना एकदम उचित नहीं है।

अनुशासन रखते हुए बड़ों को यह समझना चाहिए कि बच्चों पर उनकी किसी भूल के कारण वह रोष भी प्रकट करें तो बड़े छोटों को यह विश्वास दिलाने में भी सफल हों कि इस रोष के पीछे उनका हित ही है। उनके भीतर जो गुण हैं, अच्छाई है उसे उभारने के लिए यह आवश्यक है कि हम उत्साह बढ़ाने के लिए प्रशंसा के दो शब्द कहें। प्रशंसा के दो शब्द बच्चों को सुधारने के कार्यों में हमें निश्चित सफलता दिलाते हैं।

मेरा परिचय एक ऐसे परिवार से है, जहाँ बच्चों को साधारण भूलों के कारण माँ से डांट फटकार ही मिलती है। यह माँ डांटते समय सीमाओं को पार कर जाती है और उत्साह के दो शब्द मुँह से निकालने में बड़ी कंजूस है। इस प्रकार वह उनके लिए बुराई का वह रास्ता खोल रही है जिसका परिणाम ऐसा भंयकर हो सकता है जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

बच्चे मानते हैं तो परिवार बनता है। उसके आधार को हम शक्ति देते हैं। इसके लिए हमें यह समझना होगा कि बच्चों की भूलों के कारण हम रोष प्रकट करते समय हमें उन्हें यह विश्वास दिलाना है कि इस रोष के पीछे उनका ही हित है। महत्वपूर्ण बात यह है कि बच्चों के गुण–अवगुणों अथवा योग्यता या कमियों को धैर्य, विवेक से आंकने की आवश्यकता है।

कहल प्रायः सभी घरों में होता है। पर विचार करना चाहिए कि यह हो ही क्यों? हमें इसे गम्भीरता से लेना चाहिए। धन, सम्पत्ति को लेकर होन वाले झगड़े परिवार को खंड–खंड कर देते हैं। कभी–कभी तो जान लेवा भी होते हैं। हम यहाँ कहना चाहेंगे कि यदि हम दूसरे के दोष पर ही ध्यान रखें, उसकी चर्चा करे तो ऐसा लगेगा कि परिवार के हित एवं उन्नति को ताक पर रख कर हम लड़ाई के अखाड़े में उतर आए हैं, ललकार रहे हैं दूसरे को 'आओ हमसे दो हाथ कर लो।' इसके स्थान् पर हमारा प्रयत्न होना चाहिए, हमें दो ही क्यों, चार हाथ चाहिए, पर करने के लिए नहीं बटाने के लिए। मानते हैं, हम और कौन नहीं जाता और जानने से अधिक चाहता है कि वह बड़प्पन सिद्ध कर सकते। अहं तो तृप्त करना चाहिए। कौन रोकता है, कीजिए, पर यह समझ लें कि ऊँची जगह बैठने और शोर मचाने से ही बड़प्पन का सिक्का जमा तो कांव–कांव करने वाला कौआ हमसे बाजी मार जाएगा। परिवार में इकट्ठे रहें, यह समझते हुए कि परिवार हमारी क्लास है।

यहाँ उन्हें भी जो बड़प्पन की स्थिति चाहते हैं, अवसर मिलता है, योग्यता दिखाने का बड़ा बन जाने का। पर जरा सम्भलना पड़ेगा। जहाँ वह चाहते हैं छोटे–छोटेपन की मर्यादा समझें, वहाँ क्या यह उनके लिए भी जान लेना उचित नहीं होगा कि बड़प्पन की मार्यादा को भी उन्हें केवल निभाना ही नहीं पड़ेगा, बल्कि यह भी देखना होगा कि उन्हें पार नहीं किया जाए।

कौन सा क्षेत्र है ऐसा जहाँ बड़ों की आवश्यकता नहीं है? क्लास में विद्यार्थी एक दूसरे को नहीं पढ़ाते। वह अध्यापक पढ़ाता है जो योग्यता ओर ज्ञान की दृष्टि से जो बड़ा हो। इसीलिए परिवार को भी बड़ा चाहिए, जिसकी आयु केवल वर्षों में ही लम्बी न हो, अनुभव सूझ–बूझ और विवेक की खाद में उसमें पुष्टि ओर निखार भी हो तो जिसमें यह गणु हो, वहीं परिवार की व्यवस्था और संचालन करे। पूरे परिवार की माला जिसमें उसे एक जुट रखने और निखरने का प्रत्येक अवसर देने और उसके बिखरने का कभी नाम न लेने का संकल्प हो जिसके मन का, परिवार का, ऐसा हर सदस्य उसका मन का है, ऐसे सुमन के रूप में जिसमें अपने उपयोगी गुण, योग्यता और स्वभाव की सुगन्ध है, इस माला में पिरोया गया है। इस माला को परिवार के इष्टदेव को सभी के आदर सम्मान के रूप में अर्पण किया जाए।

त्रुटियाँ सभी में हैं, इसीलिए कुछ सीखने के लिए। अनुभव, योग्यता के रूप में जो हमारे पास नहीं है, वह परिवार में एक दूसरे से ले सकते हैं। पूर्ण तो केवल ईश्वर की सत्ता हैं। एक दूसरे की कमियों को उभारने उसे नीचा दिखाने के स्थान पर हमें नम्रतापूर्वक उन्हें ताक में रखकर अपने को सीखने के स्थान पर दूसरे को सिखाने के स्थान पर रखना चाहिए। इससे हम एक दूसरे के सहयोगी बनते हैं, पूरक बनते हैं किसी को हम नीचा नहीं दिखाते, उन्हें भी निगहा में उठाते हैं, जो हमें अपने से नीचा देखते हैं। परिवार में बहू बनकर आई लड़की सम्बन्ध का क्षेत्र बढ़ाती है। वह दो एकदम अपरिचित परिवारों के बीच की कड़ी होती है। पुराने सम्बन्ध छोड़ते हुए वह नए सम्बन्ध तलाशती है। सास में वह माँ ढूँढ़ती है, देवरानी, जिठानी में छोटी बड़ी बहिने चाहिए। उसे जो सहेलियाँ हों जिनमें मीठी चुहल शरातभरा अठखेलियाँ भी हों।

इस प्रकार हम देखते हैं कि परिवार में हम एक दूसरे के हित साधने, स्वयं उठाने में सहयोग देते हैं। एक दूसरे को समझने की आवश्यकता है। हम बड़े तभी हो सकते हैं, जब बच्चों को सुधारने की इच्छा हमारे मन में हो, हम उन्हें अपने अनुशासन आज्ञा के आधीन मात्र पोषण–भरण से नहीं ला सकते। जो हम उन्हें सिखा रहे हैं, वह आचरण के रूप में कहाँ दिखा रहे हैं। बच्चों पर प्रभाव पड़ता है आचरण से उदाहरण से।

हमारा परिवार, हमारा घर (गृह) इसलिए है कि उसमें जो चाहिए, उसका ग्रहण किया जाता है। उसमें रहने वालों के बीच प्यार को यदि चन्द्र माना जाए तो अभाव का उसे ग्रहण नहीं लगना चाहिए। ईट–पत्थर से मकान चिना जाता है, घर नहीं। भावना में छिपे प्यार आदर वह किनारे हैं, जिनके बीच अपने को पाकर कोई मेहमान सुख का अनुभव करता है। यदि ऐसा हो धर परिवार हमारा तो हमें मर कर किसी स्वर्ग में जाना नहीं पड़ेगा। यही हमारे लिए वह स्वर्ग होगा जिस पर मर मिटने को हम तैयार रहेंगे।

प्रवेश प्रारम्भ

गुरूकुल महाविद्यालय रूद्रपुर तिलहर शाहजहाँपुर उ०प्र० वैदिक शिक्षा प्रणाली तथा आधुनिक शिक्षा प्रणाली के माध्यम से विद्यार्थियों को संस्कारवान चरित्रवान कर्तव्यनिष्ठ विद्वान बनाने के उद्देश्य से निरन्तर ७० वर्षों से प्रयासरत है समाज में एक अलग स्थान बनाने एवं आर्ष परम्परा को अग्रसर करने हेतु अपने परिवार से एक बालक को गुरूकुल में प्रवेश अवश्य दिलायें गुरूकुल रूद्रपुर आपको अमंत्रण करता है।

प्रबन्धक

सम्पर्क सूत्र – ८००४६७०३६५ छोटे सिंह

चेहरे का सौन्दर्य

आजकल के किशोर किशोरियों में दिन प्रतिदिन मुंहासों की समस्या बढ़ती जा रही हैं। हर पाँच सात युवाओं में से एक दो तो इस समस्या से ग्रस्त नजर आ ही जाते हैं।

मुंहासों से चेहरे का सौन्दर्य तो बिगड़ता ही है साथ ही ग्रस्त व्यक्ति खुद को हीन महसूस करने लगता है। यह समस्या कभी कभार तो इतनी भारी हो जाती है कि होने वाले रिश्ते नाते भी टूटने लगते हैं। वैसे तो मुंहासे बारह से लेकर पच्चीस वर्ष की उम्र तक ही होते हैं पर कभी–कभी ये पैंतीस–चालीस बरस की उम्र तक भी नजर आ जाते हैं। चूँकि बारह से पच्चीस वर्ष की उम्र किशोर व युवावस्था रहती हैं अतः इस उम्र में तली, चटपटी, तेज नमक मिर्च और ज्यादा मसालेदार चीजें खाने का शौक भी ज्यादा होता है, इसी कारण से मुंहासे उभर आते हैं।

इसके अलावा इसी उम्र में किशोर और युवाओं में शारीरिक, मानसिक और यौन परिवर्तन भी होते हैं। इन परिवर्तनों में शरीर की अन्तस्राावित ग्रंथियों द्वारा उत्सर्जित हार्मोनों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। कभी–कभी ये हारमोन शरीर में 'सेट' नहीं हो पाते जिससे मुंहासों की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

कुछ आयुर्वेदिक विशेषज्ञ मुहासों की उत्पत्ति में पेट की गड़बड़ को मुख्य कारण मानते हैं। पाचन तन्त्र उत्सर्जन तन्त्र की कार्य प्रणाली में अवरोध के कारण यदि समयबद्ध तरीके से मल विसर्जन न हो पाये तो विष रूप में जमा मल खून को दूषित कर मुंहासों की समस्या पैदा कर देगा। मुंहासों से ग्रस्त रोगियों में एक सर्वे कराया गया तो साठ से सत्तर प्रतिशत रोगियों ने स्वीकार किया था कि उनका पेट साफ नहीं रहता।

मुंहासो की शुरूआत भी अजीब होती है। पहले ये छोटे–छोटे दानों के रूपों में चेहरे पर उभरते हैं। चेहरे में भी ललाट, गालों और नाक पर इनकी मात्रा ज्यादा होती है।

यदि रोग की तीव्रता ज्यादा हो तो कंधे, पीठ और हाथ पैरों पर भी हो सकते हैं। कुछ रोगियों में मुंहासे दाने के आकार से बड़े होकर पीवयुक्त गांठों के रूप में भी हो सकता है। इन मवादयुक्त गांठों में दर्द, जलन, सूजन और लालिमा पाई जाती है। कुछ मुंहासे काले सिर वाले होते हैं जिन्हें कील कहा जाता है। यदि इनको दबाया जाये तो काले सिर के साथ–साथ भीतर से सफेद रोम जैसा पदार्थ भी बाहर निकलता है और इससे पैदा होने वाला छेद स्थाई हो जाता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि इन मुंहासों से दूर कैसे रहा जाय? यह कील मुंहासे हो गए तो छुटकारा कैसे मिले?

आइये आपको ऐसी छोटी–छोटी सावधानियाँ और उपचार बताते हैं जिनसे इस समस्या का छुटकारा मिल सके।

सावधानियाँ–

मुहासे पैदा ही न हों इसके लिए निम्न सावधानियाँ बरतें–

किशोरावस्था और युवावस्था मुंहासों के लिए स्वर्णकाल होता है अतः इस समय विशेष ध्यान रखते हुए खान पान में सावधानी बरतें। ज्यादा तेज मसालेदार सब्जियां, तली भुनी खाद्य सामग्री न खाए। मिठाई, आईसक्रीम अचार, चॉकलेट और गर्मी वाले खाद्य पदार्थ न खाएं।

चेहरे और पेट की सफाई का पूरा ख्याल रखें। चेहरे को दिन में दो चार बार अच्छे फेसवाश, मेडीकेटिड साबुन या सिर्फ ठण्डे सादे पानी से धोयें। चेहरे पर कभी भी पसीना, धूल, गन्दगी, धुएं का असर न पड़ने दें। पेट की सफाई भी करते रहें अर्थात् समय समय पर जल नेति, एनिमा या दस्तावर की सहायता से पेट साफ करते रहें। पाचन अच्छा हो इसके लिए हल्का, सुपाच्य और साधारण भोजन ही लें। आलू, चावल, तेल आदि गरिष्ठ भोजन का सेवन न करें।

चेहरे पर एकाध दाना (मुंहासा) उभर भी आए तो उसे फोड़ें, नोंचे या छुएं नहीं। इससे संक्रमण हो सकता है और समस्या बढ़ सकती है।

हमेशा स्वयं का तौलिया, रूमाल ही इस्तेमाल करें। दूसरों के संक्रमित तौलिए आपके लिए हानिप्रद हो सकते हैं।

उपचार– यदि सावधानियों के उपरान्त भी कील–मुंहासे उभर ही आए तो निम्न घरेलू और कारगर नुस्खे आजमाएँ, जल्दी ही राहत मिलेगी।

- नींबू का रस, ग्लिसरीन और गुलाब जल को बराबर मात्र में मिलकार दिन में दो बार चेहरे पर लगाएं। बाद मे ठण्डे पानी से धो दें। सप्ताह भर का प्रयोग भी लाभप्रद रहेगा।
- गाजर, टमाटर व चुकन्दर का रस पिएं। खून की सारी समस्या दूर हो जाएंगी।
- जायफल को कच्चे गोदूग्ध में घिसकर मुंहासों पर लगाएं। सूखने पर धो दें। शीघ्र फायदा मिलेगा।
- जैतून का तेल भी चेहरे की ताजगी के लिए हितकर प्रयोग है।
- स्वच्छ ताजा ओस की बूँदों को नित्य यदि चेहरे पर मला जाए तो कील मुंहासे ठीक होकर चेहरा ताजगी भरा बनता है।
- दुग्ध स्नान भी मुंहासों में लाभप्रद है। एक कटोरी में कच्चा या गुनगुना दूध लें। इस दूध को रुई के फाहे की सहायता से चेहरे पर मलिए, चेहरा कान्तिवान व दाग धब्बों से रहित हो जाएगा।
- मुल्तानी मिट्टी का लेप मुंहासों को जल्दी ही हटा देता है।
- चंदन की लकड़ी को दूध या पानी में घिसकर चेहरे पर लेप करें। सूखने पर साफ पानी से धो दें। यह प्रयोग महीने भर करें, कील मुंहासे जड़ से ही दूर रहेंगे।
- संतरे के छिलको को छाया में सुखा कर चूर्ण बना लें। इस चूर्ण का प्रयोग चेहरे पर लेप के रूप में करें तो फायदेमंद रहेगा।
- ऐलोपेथी में फुसीडीन, क्लेडोमाइसीन, रेटीनों–ए–क्रीम डॉक्टर को बताकर प्रयोग कर सकते है। इतने प्रयासों के बाद भी यदि मुंहासे नियन्त्रण से बाहर हो तो जल्दी ही चर्म रोग विशेषज्ञ से सम्पर्क करें।

गाजियाबाद जिले के आर्य नेता योगेन्द्र सिंह जी योगी (पतला वाले) दिवंगत

आर्य समाज पतला के अध्यक्ष चौ० योगेन्द्र सिंह आर्य (योगी) का अचानक स्वर्गवास हो गया। वे आर्य समाज के उदार और सर्व प्रिय नेता थे समाज सुधारक शिक्षा क्षेत्र में क्रान्तिकारी कदम उठाकर चौ० चरण सिंह इण्टर कालेज चौ० चरण सिंह डिग्री कालेज आई०टी०आई० तथा माता गायत्री देवी कन्या इण्टरकालेज की स्थापना की चौ० चरण सिंह जी पूर्व प्रधानमंत्री से आत्मीय सम्बन्ध थे प्रा० कैलाशनाथ सिंह जी के परममित्र थे। राष्ट्रपति महामहिम ज्ञानी जैल सिंह जी एवं मुख्यमंत्री मा० मुलायम सिंह जी को आपने कालेज में बुलाया था। आर्य समाज का कार्य मुख्य उद्देश्य था गुरूकुल कांगड़ी के स्नातक रहे गुरूकुल पूठ के आप संरक्षक थे आपका शुभ आशीर्वाद संस्था को सदैव मिलता रहा। आपके दामाद श्री आशु वर्मा जी गाजियाबाद नगर महापालिका के चेयरमैन हैं। अपने निधन से आर्य जगत की हानि हुई है। मैं आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र० की ओर से डा० धीरज सिंह जी प्रधान की ओर से इस शोकाकुल परिवार के प्रति अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हुआ प्रभु से परिवार के प्रति धैर्य की कामना करता हूँ।

धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा, उ०प्र०

पृष्ठ ४ का शेष

शतपथ ब्राह्मण में ....

करना चाहिए। इस पर राजा ने फिर पूछा–

यद् व्रीहियवौ न स्यातां केन जुहुया इति।

मान लें कि चावल और जौ नहीं हैं तो यज्ञ कैसे करें? उत्तर में ऋषि ने कहा–

या अन्या औषधय इति।

जो अन्य औषधियां मिले, उनसे अग्निहोत्र करें। जनक ने पुनः पूछा– **यदारण्या औषधयो न स्युः केन जुहुया इति।**

यदि ये जंगली औषधियां भी न मिलें तो यज्ञ किससे करें? उत्तर में ऋषि का कथन था– **वानस्पत्येन।**

उस स्थिति में बट, पीपल, शमी आदि वृक्षों की समिधओं के द्वारा यज्ञ करें। जंगल में थ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। जनक का अगला प्रश्न था–**यद्वानस्पत्यं न स्यात् केन जुहुया इति।**

मान लो कि किसी देश (यथा मरुस्थल) में वृक्षों के न होने से समिधाएं भी उपलब्ध न हों तो यज्ञ कैसे होगा? प्रत्युत्पनमति ऋषि का उत्तर था।

अभ्दिरिति।

इस स्थिति में जल से यज्ञ करों अर्थात् मंत्रोच्चारण पूर्वक पात्र से जल लेकर उसे अन्य पात्र में मंत्रोच्चारण पूर्वक छोड़ें।

जनक की प्रश्नावली खत्मा होने वाली नहीं थी। उसने कहा **यद् उदकानि न स्युः केन जुहुया इति।** मान लो किसी देश में जल भी न मिले तो किससे यज्ञ करें? ऋषि का उत्तर था– **''न वा इह तर्हि किं च नासीत अथैनदह्यतैव सत्यं श्रद्धायामिति''** यदि कुछ भी नहीं उपलब्ध हो तो श्रद्धा की अग्नि प्रज्ज्वलित कर उसमें सत्य की आहुति देवें अर्थात् यज्ञ का मूल भाव हृदय में श्रद्ध को उदीप्त करना तथा सत्य को धारण करना है। यदि याज्ञिक के मन और आचरा सत्य और श्रद्धा (सत्य के प्रतिनिष्ठा) का भाव विद्यमान है तो यह समझ लेना चाहिए कि वह सच्चा याज्ञिक है। तथापि इसका आशाय भी नहीं है कि अग्निहोत्र के लिए आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध होने पर भी हम इस नित्य कृत्य को न करें। अपवाद रूप में जंगली वनस्पतियां, समिधाएं आदि से यज्ञ करना चाहिए। यज्ञ का न करना कथमपि उचित नहीं है। यज्ञ जिस 'यज्' धातु से निष्पन्न होता है उसमें देवपूजा, संगतिकरण तथा दान का भाव निहित है। विद्वानों का सत्कार, भौतिक देवों (जल, वायु अग्नि, पृथ्वी, आकाश) का यथायोग्य उपयोग एवं उनमें संगति स्थापन तथा अभाव ग्रस्तों को अन्न, धनादि तथा जिज्ञासु को विद्या दान करना यज्ञ भावना है। यही कारण है कि शतपथ ब्राह्मण ने यज्ञ को विष्णु स्वरूप कहा यज्ञो वै विष्णुः (सर्वव्यापक) तथा उसे श्रेष्ठतम कर्म बताया **यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म।**

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर/फक्सः ० २८६३२८
का० प्रधान- ०६४१२७४४३४१, मंत्री- ०६८३७४०२१६२, व्यवस्थापक- २२२२०५
ई-मेल : apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,
....
....

राजा पर धर्म का ....

हमारी रक्षा करो। सोमादि, औषधि, स्वर्णादि धन और नैरोग्य का राज्य में बाहुल्य हो। हमारे पशुधन की आप रक्षा करो। आकपा ऐश्वर्य सारे राज्य में व्यापक रहे। हमारे पिता आदि परिवार जनों की भी आप रक्षा करो। पुनः पुरोहत उसे आदेश देता है कि हे राजन्! यह राष्ट्र तुझको प्राप्त हुआ है, इसमें तू तेज के साथ उदय हो। पूजित होकर प्रजा का अनुरंजन करने वाला होता हुआ तू उनमें एकछत्र होकर विराज। सब दिशओं में रहने वाली वाली प्रजाएं तेरा अह्वान करें। तू राष्ट्र में नमनीय तथा सबको प्राप्त हो। राज्य के लिए पांच दिशाओं में रहने वाली प्रजाओं ने तुझे चुना है। राज्य में ऐश्वर्य और अच्छे स्थान पर राजधानी बना और हमारे लिए धनों का विभाजन कर। शुक्रचार्य जी ने पुरोहित के पद को सर्वोपरि मानते हुए कहा है– पुरोधा च प्रतिनिध प्रधान सचिवस्तथा.. अर्थात मंत्रिमण्डल का निर्माण करती बार सर्वप्रथम पुरोहित का ही नाम आता है जो धर्म विभाग का मुखिया कहा गया हैं उसका कार्य राजा को धार्मिक विषयों में सलाह देने का था। वह शांति और युद्ध दोनों अवस्थओं में राजा का मित्र और पथप्रदर्शक हुआ करता और युद्ध अवसर पर राजा की रक्षा और जिय के लिए प्रार्थना तथा युद्धभूमि में सैनिकों का उत्साह बढ़ता था। ऐतरेय ब्राह्मण में आया है–

तस्मै निशः संजानते सम्मुख। एकमनसो यस्वै
विद्वाचरणग्रे राष्ट्रगीयः। पुरोहितः।।
तस्मै विशः स्वयमेवानयन्त इति। राष्ट्रणि वैविशः राष्ट्रण्येवेनं। तत्स्ट्राण्येवेनं। तत्स्वयमुपमान्ति।।

अर्थात् जो राजा बिना पुरोहित के होता है वह शीघ्र नष्ट हो जाता है और जिस राजा के राष्ट्र की रक्षा करने वाला विद्वान पुरोहित होता है उसकी सब प्रजाएं उससे संतुष्ट रहती हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि राज्य के संचालन में पुरोहित की बहुत ही प्रमुख भूमिका हुआ करती थी। राजा की अनुपस्थिति में सारे कार्य की व्यवसायी राजपुरोहित ही देखा करता था। उसका अधिकार क्षेत्र भी सर्वोपरि था। यह राजा और प्रजा दोनों ही ओर का प्रतिनिधि हुआ करता था। वह पूर्ण ज्ञानवान और धार्मत्मा हुआ करता था। महामना चाणक्य जी ने तो यहां तक कहा कि राजा राष्ट्रकृतं पापं राज्ञः पापं पुरोहितः।। अर्थात् राजा जो पाप करता है उसका फल पुरोहित को भी भुगतना पड़ता है। इसका भाव भी यही है कि पुरोहित पूर्णरूप से राज्य व्यवस्था के प्रति सजग और निष्ठावान रहता था।

पुरोहित को इतनी महत्ता देने का मुख्य कारण यही है कि वह राजा को धर्म के प्रति सदा प्रवृत्त और सजग रखे क्योंकि धर्म के मार्ग पर प्रवृत्त और सजग रखे क्योंकि धर्म के मार्ग पर चलकर ही वह राज्य का अभ्युदय कर सकने में समर्थ हो सकता है। महर्षि दयानन्द जी महाराज इस संबंध में मनु महाराज का उद्धरण देते हुए सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास में लिखते है–

'पुरोहितं च कुर्वीत वृणुयादेव चर्त्विजम्।
तेऽस्य गृह्याणि कर्माणि कुयुर्वैतानिकानि च।।

(मनु० ७.७८)

पुरोहित और ऋत्विज का स्वीकार इसलिए करे कि वे अग्निहोत्र और पक्षेष्टि आदि सब राजघर के काम किया करें और आप सर्वदा राजकार्य में तत्पर रहे, अर्थात् यही राजा का सन्ध्योपासनादि कर्म है, जो रात–दिन राजकार्य में प्रवृत्त रहना और कोई राजकाम बिगड़ने न देना।

विगत कार्यक्रमों की झलकियाँ

ब्रज घाट–गढ़मुक्तेश्वर गंगा सफाई अभियान

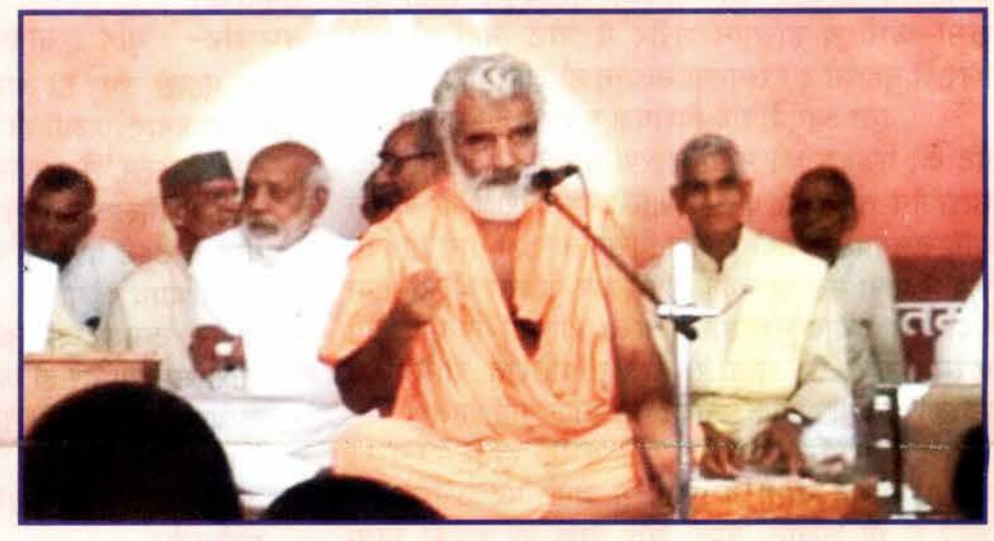

परिवार निर्माण सम्मेलन गुरूकुल पौन्धा देहरादून

स्वामी प्रणवानन्द जी, आचार्य बालकृष्ण जी, साथ में सभामन्त्री गुरूकुल पौन्धा में

गुरूकुल विश्वविद्यालय कांगडी के पूर्व कुलपति- डॉ० धर्मपाल आर्य दिवंगत

गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के पूर्व कुलपति श्री डॉ धर्मपाल जी आर्य का आकस्मिक निधन हो गया। आप आर्य समाज के नेता–विद्वान एवं गुरूकुल परम्परा हितैषी थे।

गुरूकुलपूठ की पवित्र यज्ञशाला में शन्ति यज्ञ किया गया तत्पश्चात् वहीं पर श्राद्धांजली सभा का आयोजन हुआ सभा की अध्यक्षता सभामंत्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती ने की सभा में प्राचार्य राजीव कुमार जी, आचार्य सुधीर कुमार, आचार्य दिनेश कुमार, आचार्य कुलदीप शास्त्री स्वामी अखिलानन्द सरस्वती आचार्य हर्ष देव जी ने उनके विषय में संस्मरण सुनाये बाद में स्वामी जी ने बताया कि गुरूकुल पूठ की स्थापना से ही वे यहाँ आते रहे हैं गतवर्ष भी कार्यक्रम में आये थे वे बड़े सरल–साधु स्वभाव के स्वामी थे गुरूकुल कांगड़ी जैसी बड़ी संस्था के लम्बे समय तक कुलपति रहे– दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्षा कई वर्षों तक रहे आपके कार्यकाल में आर्य सन्देश का सुन्दर प्रकाशन होता रहा।

गुरूकुल परिवार एवं आर्यप्रतिनिधि सभा की अध्यक्षता में शोक सभा कर श्रद्धांजली दी गई आर्य मित्र परिवार की ओर से उन्हें शत्–शत् नमन।

सोमेन्द्र शास्त्री
सम्पादक मण्डल

आवश्यक सूचना

१. प्रदेश की सभी आर्य समाजे श्रावणी पर्व को बड़े ही श्रद्धा उत्साह के साथ मनावें और उसकी सूचना सभा कार्यालय में भेंजे या मोबाइल से वाट्सऐप व्यवस्थापक जी के नम्बर पर करें जिससे उसे समय से प्रकाशित कर सभी को सूचित किया जा सके।

२. प्रदेश की समस्त आर्य समाज एवं जिला सभाओं के अधिकारियों को सूचित किया जा रहा है कि अपने स्तर पर धार्मिक एवं सामाजिक सूचना आर्य मित्र प्रकाशन में चित्र सहित भेजकर अपनी सक्रियता का परिचय देते रहे साथ ही निर्वाचन की कार्यवाही भी समय समय पर भेजते रहें।

स्वामी धर्मेश्वनानन्द सरस्वती
सभा मन्त्री

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक – मुद्रक –प्रकाशक –श्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शारदा प्रिंटिंग प्रेस, माडल हाउस, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है– सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।